

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र (1850-1885)

नए ज़माने की मुकरी

सब गुरुजन को बुरो बतावै ।  
अपनी खिचड़ी अलग पकावै ॥  
भितर तत्व न झूठी तेजी ।  
क्यों सखि सज्जन नहिँ अँगरेजी ॥१॥  
तीन बुलाए तेरह आवैं ।  
निज निज विपता रोइ सुनावैं ॥  
आँखौ फूटे भरा न पेट ।  
क्यों सखि सज्जन नहिँ ग्रैजुएट ॥२॥ .../...  
रूप दिखावत सरबस लूटै ।  
फंदे में जो पड़ै न छूटै ॥  
कपट कटारी जिय मैं हूँलिस ।  
क्यों सखि सज्जन नहिँ सखि पूलिस ॥५॥  
भीतर भीतर सब रस चूसै ।  
हँसि हँसि कै तन मन धन मूसै ॥  
जाहिर बातन में अति तेज ।  
क्यों सखि सज्जन नहिँ सखि अँगरेज ॥६॥  
नई नई नित तान सुनावै ।  
अपने जाल में जगत फँसावै ॥  
नित नित हमें करै बल-सून ।  
क्यों सखि सज्जन नहिँ सखि कानून ॥७॥

लखौ किन भारतवासिन की गति

लखौ किन भारतवासिन की गति ।  
मदिरा मत्त भये से सोअत है अचेत तजि सब मति ॥  
घन गरजै जल बरसै इन पर विपति परै किन आई ।  
ये बजमारे तनिक न चौकत ऐसी जड़ता छाई ॥  
भयो घोर अँधियार चहूँ दिसि तामहँ बदन छिपाए ।  
निरलज परे खोइ आपुनपौ जागत हू न जगाए ॥  
कहा करें इत रहिकै अब जिय तासों यहै विचारा ।  
छोड़ि मूढ़ इन कहँ अचेत हम जात जलधि के पारा ॥

(< भारत जननी नाटक में भारत लक्ष्मी की उक्ति)

उपाध्याय बदरीनारायण चौधरी "प्रेमघन" (1855-1922)

क्षोभ

है कैसी कजरी यह भाई ? भारत अम्बर ऊपर छाई ॥  
मूरखता, आलस, हठ के घन मिलि मिलि कुमति घटा घिरि आई ।  
बिलखत प्रजा बिलोकत छन छन चिन्ता अंधकार अधिकाई ॥  
बरसत बारि निरुद्यमता को, दारिद दामिनि दुति दरसाई ।  
दुख सरिता अति वेग सहित बढ़ि, धीरज विपुल करार गिराई ॥  
परवसता तून छाया लियो, छिति, सुख मारग नहि परत लखाई ।  
जरि जवास जातीय प्रेम को, बैर फूट फल भल फैलाई ॥  
छुआ रोग सों पीड़ित नर, दादुर लौं हाहाकार मचाई ।  
फेरि प्रेमघन गोबरधनधर ! दौरि दया करि करहु सहाई ॥

चरखे की चमत्कारी

(१)

चला चल चरखा तू दिन रात ।  
चलता चरख बनाता निस दिन ज्यों ग्रीषम बरसात ॥

मन मन मंत्र जपा कर मन में सुन न किसी की बात ।  
कात कात कर सूत मैन्चिस्टर को कर दे मात ॥

टेकुआ का सर साध धनुष रघुबर की लेकर तांत ।  
लंका से लंकाशायर का कर बिलम्ब बिन घात ॥

शक्ति सुदर्शन चक्र की दिया हरि ने तुझे दिखात ।  
तेरे चलने की चरचा सुनि यूरेप जी अकुलात ॥

ज्यों ज्यों तू चलता त्यों त्यों आता स्वराज्य नियरात ।  
परतन्त्रता दीनता भागी जाती खाती लात ॥

चलना तेरा बन्द हुआ जबसे भारत में तात ।  
दुखी प्रजा तबसे न यहाँ की अन्न पेट भर खात ॥

जो कमात दै देत विदेसिन बसन काज ललचात ।  
दै दै अन्न नैनसुख लेत सिटिन साटन बानात ॥

चल तू जिससे खायँ दुखी भर पेट दाल औ भात ।  
सस्ता सुद्ध स्वदेशी खद्दर पहिन छिपावें गात ॥

हिन्दू मुसलिम जैन पारसी ईसाई सब जात ।  
सुखी होंय हिय भरे प्रेमघन सकल भारती भ्रात ॥

### श्रीधर पाठक (1859-1928)

#### देश-गीत

जय जय प्यारा भारत-देश

१

जय जय प्यारा, जग से न्यारा

शोभित सारा, देश हमारा

जगत-मुकुट, जगदीश-दुलारा

जग-सौभाग्य, सुदेश

जय जय प्यारा भारत देश

२

प्यारा देश, जय देशेश

अजय अशेष, सदय विशेष

जहाँ न संभव अघ का लेश

संभव केवल पुण्य-प्रदेश

जय जय प्यारा भारत-देश

३

स्वगिक शीश-फूल पृथिवी का

प्रेम-मूल, प्रिय लोकत्रयी का

सुललित प्रकृति-नटी का टीका

ज्यों निशि का राकेश

जय जय प्यारा भारत-देश

४

जय जय शुभ्र हिमाचल-शृंगा

कल-रव-निरत कलोलिनि गंगा

भानु-प्रताप-समत्कृत अंगा

तेज-पुंज तप-वेश

जय जय प्यारा भारत-देश

५

जग में कोटि-कोटि जुग जीवै  
जीवन-सुलभ अमी-रस पीवै  
सुखद वितान सुकृत का सीवै  
रहै स्वतंत्र हमेश  
जय जय प्यारा भारत-देश

### बलि-बलि जाऊँ

१

भारत पै सैयाँ में बलि-बलि जाऊँ  
बलि बलि जाऊँ हियरा लगाऊँ  
हरवा बनाऊँ घरवा सजाऊँ  
मेरे जियरवा का, तन का, जिगरवा का  
मन के, मँदिरवा का प्यारा बसैया  
मैं बलि-बलि जाऊँ  
भारत पै सैयाँ में बलि-बलि जाऊँ

२

भोली-भोली बतियाँ, साँवली सुरतिया  
काली-काली जुल्फोंवाली मोहनी मुरतिया  
मेरे नगरवा का, मेरे डगरवा का  
मेरे अँगनवा का, क्वारा कन्हैया  
मैं बलि-बलि जाऊँ  
भारत पै सैयाँ में बलि-बलि जाऊँ